International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 131-134

संस्कृत काव्य में हिमालय पर्वत का वर्णन

डॉ० निशा

पी-एच.डी. संस्कृत, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, मरहिल, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत।

पस्तावना

संस्कृत कविता का इस लौकिक जगत् में आविर्भाव महर्षि वाल्मीकि से होता है। काव्योत्पत्ति की घटना का आधार क्रौञ्ची का करुण-क्रन्दन है। उसकी मार्मिक वेदना ने महर्षि के करुण संस्कार को जागृत कर दिया। करुणा का वह प्रवाह इतना तीव्र था कि महर्षि के नियन्त्रण से उन्मुक्त होकर स्वतः कविता रूप में प्रस्फुटित हो पड़ा। संस्कृत साहित्य के अनेक आलोचकों ने इस घटना को ही काव्योत्पत्ति की घटना स्वीकार किया है। कुछ आलोचकों का मानना है कि संस्कृत महाकाव्य की उत्पत्ति ऋग्वेद से हो गयी थी और विकास रामायण तथा महाभारत से ही हुआ है।

संस्कृत काव्यों में अनेक पर्वतों का उल्लेख किया गया हैं। उन्हीं पर्वतों में एक हिमालय पर्वत भी है। संस्कृत काव्यों में हिमालय पर्वत का अत्यन्त रोचक वर्णन प्राप्त होता है।

पर्वत का अभिधेयार्थ

पर्वत पत्थरों आदि का बना हुआ, मालाओं या श्रेणियों के रूप में फैला हुआ तथा ऊँची चोटियों वाला वह भूखण्ड होता है जो आस-पास की प्राकृतिक शक्तियों से निकलने वाले मल से बनता है। विशेषतः पर्वत ढालुएँ होते हैं।[1] ऐसा कहा जाता है कि वराह भगवान् के पृथ्वी का उद्धार करने के पश्चात् प्रलयाग्नि के खंडावशेषों से पर्वतों का निर्माण हुआ जो यहाँ-वहाँ जमकर स्थिर हो गये अतः 'अचल'[2] कहलाये। पर्वों से युक्त होने से पर्वत कहलाये। ढालों को निगल लेने से 'गिरि' हुए। इनका निर्माण प्रस्तर खंडों से हुआ अतः 'शिलोच्च्य या शैल' कहलाये।[3] कूर्म पुराण में उल्लेख किया गया है कि पृथ्वी के स्वामी प्रजापति ने पृथ्वी को उसके स्थान में प्रतिष्ठित किया और मन से उसको धारण करके अपने वराह रूप को छोड़ दिया। तदनन्तर पृथ्वी को समतल बनाकर उन्होंने प्रथम सृष्टि से दग्ध हुए समस्त पर्वतों को पृथ्वी पर स्थापित किया।[4] कादम्बरी में भी बतलाया गया है कि पर्वतों में स्थिरता होती है।[5] किरातार्जुनीय महाकाव्य में पर्वत को अविचल (स्थिर) और अटल (धैर्यवान्) बतलाया गया है।[6] ऐसा कहा जाता है कि श्रेष्ठ पर्वतों पर देवगण और अन्य पर्वतों पर दानवादि निवास करते हैं। पर्वत कहीं-कहीं पृथ्वी को धारण करने वाले और कहीं-कहीं पृथ्वी के पति भी माने गये हैं।[7] विष्णु ने पर्वतों को कामरूपी बनाया था। समय और परिस्थिति के अनुसार वे जब चाहे जैसा चाहे रूप धारण कर लेते थे।[8] ब्रह्म पुराण के अनुसार पृथु ने धनुष के सिरे से पर्वतों को उखाड़कर पृथ्वी को समतल और निवास योग्य बनाया था।[9] नैषधचरित में श्रीहर्ष वर्णन करते हैं कि पूर्वकाल में पर्वतों के घूमने से अनेक गाँव और देश उन पर्वतों के नीचे दबकर नष्ट हो जाते थे, अत एव राजा वैण्य ने उन पर्वतों को अपनी धनुष की कोटि से फेंककर पृथ्वी का विभाग कर दिया।[10] किरातार्जुनीय[11], शिशुपालवध[12], और नैषधचरित[13] में अनेक स्थलों पर पर्वत शब्द का नामोल्लेख किया गया है।

हिमालय पर्वत

ऐसा कहा जाता है कि भारत की उत्तर दिशा में देवतास्वरूप पूजनीय हिमालय नामक पर्वतों का राजा स्थित है। हिमालय पूर्व और पश्चिम के समुद्रों तक फैला हुआ है। ऐसा लगता है मानों समुद्र में प्रवेश करता हुआ यह पर्वत पृथ्वी को मापने का दण्ड हो। पर्वतों का स्वामित्व स्वयं ब्रह्मा जी ने हिमालय को दिया है।[14] महाकवि माघ ने अर्जुन द्वारा हिमालय की ओर प्रस्थान करने का उल्लेख किया है।[15] महाकवि ने अर्जुन का हिमालय के समान सुशोभित होने का दो स्थलों पर उल्लेख किया है।[16] एक मत के अनुसार हिमालय ने मेना से विवाह किया था। हिमालय और मेना की पुत्री पैदा होती है। पर्वत से उत्पन्न होने के कारण परिवार वालों ने उसका नाम पार्वती रखा। पार्वती को उनकी माता ने उमा (उ=हे(वत्से),मा=(तप मत करो)) कहकर तपस्या करने से रोका था। तबसे पार्वती का नाम उमा पड़ गया।[17] महाभारतानुसार हिमालय पर्वत पर ही रुद्र का रुद्राणी के साथ विवाह हुआ था तथा शिव का उमा के साथ समागम भी हुआ था।[18] विद्वानों के अनुसार हिमालय पर्वत को तुषाराद्रि भी कहा जाता है।[19] किरातार्जुनीय में भारवि ने शिवजी के लिए पार्वती द्वारा हिमालय पर्वत पर तपस्या करने का उल्लेख किया है। हिमालय पर्वत पर शिवजी द्वारा पार्वती के पाणिग्रहण का उल्लेख दो स्थलों पर किया है।[20] शिशुपालवध में माघ ने हिमालय पर्वत को तुषाराद्रि कहा है और पार्वती को तुषार पर्वत की कन्या बतलाया है। रावण द्वारा कैलास पर्वत को उठाने पर पार्वती ने डरकर शिवजी का आलिङ्गन किया था, जिससे शिवजी को परमानन्द हुआ था।[21] नैषधचरित में महाकवि ने दक्ष प्रजापति की कन्या सती को शिवजी की पूर्वजन्म की स्त्री बतलाया है और वही सती हिमालय पर्वत की पुत्री उमा (पार्वती) के रूप में पुनर्जन्म लेती है। इस बात का उल्लेख महाकवि ने तीन स्थलों पर किया है[22] तथा अन्य दो स्थलों पर महाकवि ने पर्वतराज हिमालय की पुत्री पार्वती को शिवजी की पत्नी बतलाया है।[23]

भारवि ने हिमालय को श्वेत कान्ति वाला कहा है।[24] शिशुपालवध में हिमालय पर्वत को शुभ्रवर्ण का बतलाया गया है।[25] नैषधचरित में भी हिमालय की शिलाओं को शुभ्रवर्ण का कहा गया है।[26] कादम्बरी में हिमालय की चोटियों के बर्फ से ढकने का संकेत मिलता है।[27] भारवि ने दो स्थलों पर हिमालय की चोटियों को बर्फ से ढकी हुई बतलाया है।[28] शिशुपालवध में माघ ने हिमालय को धराधरेन्द्र नाम से अभिहित किया है और हिमालय को बर्फीली भूमि वाला कहा है।[29] भारवि के अनुसार हिमालय की कन्दराएँ लताभवनों से युक्त हैं।[30] महाकवि माघ ने हिमालय को हेमाद्रि नाम से अभिहित किया है और उल्लेख किया है कि रावण के भय से इन्द्र ने हिमालय पर्वत की शरण ली थी।[31] महाभारतानुसार शिवजी ने हिमालयनन्दिनी गङ्गा को आकाश से उतरते हुए हिमालय पर्वत पर ही अपनी जटाओं में धारण किया था।[32] ऐसा कहा जाता है कि गङ्गा कनखल के समीप हिमालय से उतरती है।[33] महाकवि ने दो स्थलों पर हिमालय पर्वत पर गङ्गा के बहने का उल्लेख किया है और एक स्थल पर शिवजी द्वारा गङ्गा के तीव्र प्रवाह को रोकने का भी उल्लेख किया है।[34] महाकवि माघ के अनुसार हिमालय की गुफा की ओर जाता हुआ (उन्मुख) गङ्गा का तीव्र जलप्रवाह अत्यन्त सुशोभित होता है।[35] महाकवि भारवि ने दो स्थलों पर हिमालय द्वारा अपने शिखरों से सूर्यबिम्ब को ढकने का उल्लेख किया है[36] तथा एक अन्य स्थल पर हिमालय के एक भाग को सूर्य की किरणों से प्रकाशित तथा दूसरे भाग को घने अन्धकार से युक्त बतलाया है।[37] नैषधचरितानुसार सूर्य सुमेरु की प्रदक्षिणा करता है, हिमालय की नहीं। इसलिए सूर्य द्वारा अपमानित होने से हिमालय को अकीर्त्ति मिलती है।[38] महाभारतानुसार हिमालय पर्वत पर देवर्षि और सिद्ध पुरुष सदा विचरण करते रहते हैं और अप्सराएँ भी हिमालय पर्वत का सदा सेवन करती हैं।[39] महाकवि भारवि ने हिमालय पर्वत पर भूतल, आकाश और स्वर्ग के निवासियों का

अदृष्ट रूप में निवास करने का एक स्थल पर उल्लेख किया है[40] और कुछ अन्य स्थलों पर देव-देवाङ्गनाओं का हिमालय पर रहने का वर्णन किया है।[41] ऐसा कहा जाता है कि जो वेदान्त ज्ञाता द्विज इस जीवन को नाशवान् समझकर इस पर्वत पर रहकर देवताओं का पूजन करता है तथा मुनियों को प्रणाम करके विधिपूर्वक अनशन के द्वारा अपने प्राणों को त्याग देता है वह सिद्ध होकर सनातन ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है।[42] भारवि के अनुसार जन्म मरण से रहित परमात्मा को पाने के इच्छुक साधक मुनि यहाँ रहते हैं। यहाँ पर रहकर संसार से छूटकारा देने वाले तत्त्वज्ञान को प्राप्त करते हैं।[43] एक स्थल पर महाकवि ने उल्लेख किया है कि हिमालय के दर्शन मात्र से ही लोगों के पाप दूर हो जाते हैं।[44]

कुमारसंभव के उल्लेखानुसार हिमालय की गुफाओं में रात को चमकने वाली जड़ी-बूटियाँ बहुत मात्रा में होती है। जब किरात लोग अपनी प्रियतमाओं के साथ उन गुफाओं में विहार करने आते हैं तब ये चमकीली जड़ी-बूटियाँ ही उनकी काम-क्रीड़ा के समय बिना तेल के दीपक बन जाती हैं।[45] महाकवि भारवि ने हिमालय पर रात में औषधियों के प्रज्जवलित होने का उल्लेख तीन स्थलों पर किया है।[46] महाभारत के उल्लेखानुसार गिरिराज हिमालय विविध धातुओं से विभूषित अनेक प्रकार के शिखरों से युक्त है।[47] यह पर्वत सब रत्नों की खान है।[48] महाकवि भारवि ने अनेक स्थलों पर हिमालय पर्वत को अनेक प्रकार के रत्नों से युक्त बतलाया है[49] तथा एक स्थल पर अत्यन्त धनराशि वाले हिमालय की वजह से पृथ्वी को अन्य लोकों से श्रेष्ठ कहा है।[50] मेघदूत में हिमालय पर्वत की शिलाओं पर शिवजी के चरणों के चिह्न दिखाई देने का उल्लेख किया गया है।[51] महाकवि ने एक स्थल पर हिमालय पर्वत पर शिवजी के निवास करने का[52] तथा एक अन्य स्थल पर शिवजी द्वारा अपने चरण से हिमालय को झुकाने का उल्लेख किया है।[53] कुमारसंभव में हिमालय की चोटियों को ऊँची बतलाया गया है।[54] भारवि ने भी हिमालय पर्वत को बहुत ऊँचा बतलाया है।[55] महाकवि उल्लेख करते हैं कि हिमालय के दुर्गम भाग किसी से भी पूरी तरह ज्ञात नहीं है।[56] रघुवंश के उल्लेखानुसार हिमालय पर्वत झरनों से जल बहाते हुए अत्यन्त शोभायमान प्रतीत होता है।[57] महाकवि ने दो स्थलों पर हिमालय पर्वत पर झरने के बहने का वर्णन किया है।[58] महाभारतानुसार विषधर सर्प हिमालय पर्वत का सेवन करते हैं।[59] किरातार्जुनीय महाकाव्य के वर्णनानुसार हिमालय पर्वत सर्पों के समूह से व्याप्त और विस्तृत है।[60] एक स्थल पर तो पाताल के रक्षक साँपों की प्यारी सुधा (अमृत) के हिमालय पर रहने का उल्लेख किया गया है।[61]

महाकवि ने हिमालय के इन्द्रधनुष से युक्त होने का[62] तथा हिमालय पर हाथी[63] के विचरण करने का उल्लेख भी किया है। भारवि ने हिमालय में नदियों के बहने तथा कमलों से युक्त होने का उल्लेख अनेक स्थलों पर किया है।[64] हिमालय के वृक्षों के फूलों से लदे होने का वर्णन भी अनेक स्थलों पर किया है।[65] महाकवि ने एक स्थल पर इन्द्र द्वारा काटे गए हिमालय के पंख के फिर से उगने का[66] तथा एक अन्य स्थल पर हिमालय को पंखों से रहित होने का वर्णन किया है।[67] किरातार्जुनीय में महाकवि वर्णन करते हैं कि किरातसेना की प्रत्यञ्चा की टङ्कार तथा ढाल की खनखनाहट गिरिराज हिमालय की कन्दराओं में नहीं समा पाती। वह आवाज पृथ्वी को कम्पित करती हुई दसों दिशाओं में गूँजती है।[68] महाकवि विवेचन करते हैं कि अर्जुन के बाण प्रमथगणों को नहीं मार पाये। प्रमथगण तो अमर होते हैं, इसलिए वे बाण मुख नीचे किए हुए हिमालय में कहीं छिप जाते हैं।[69] अर्जुन के नागास्त्र चलाने पर शिवजी गरुड़ास्त्र चलाते हैं। गरुड़ के परों से उठी पवन अत्यन्त वेग से बहने लगती है जिससे हिमालय के शिखर भ्रान्तिमान् हो जाते हैं।[70] सतीविजय महाकाव्य में भी हिमालय पर्वत के सबसे ऊँचे बर्फ से शोभायमान गौरीशंकर नामक शिखर का वर्णन किया गया है।[71]

उपर्युक्त प्रमाणों से विदित होता है कि हिमालय पर्वत अत्यन्त प्राचीन पर्वत है। वैदिक, पौराणिक और ऐतिहासिक काल से हिमालय पर्वत का अस्तित्व प्राप्त होता है। हिमालय पर्वत को देवस्वरूप माना गया है। इस पर्वत को देव, यक्ष, गन्धर्व तथा किन्नरों की क्रीड़ास्थली भी कहा जाता है। यह पर्वत अनेक रत्नों तथा औषधियों का भण्डार है। हिमालय पर्वत के कारण पृथ्वी को अन्य लोकों से अत्यन्त श्रेष्ठ तथा भिन्न माना गया है। अतः यह हिमालय पर्वत समस्त प्राणी जगत के लिए हितकारक है।

सन्दर्भ

1. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, तृतीय खण्ड, पृ0 439
2. राणाप्रसाद शर्मा, पौराणिक कोश, पृ0, 295
3. वही
4. इत्थं .....।
   ..... वराहवपुरीश्वरः।।
   ततः संस्थानमानीय पृथिवीं पृथिवीपतिः।
   मुमोच रूपं मनसा धारयित्वा प्रजापतिः।।
   पृथिवीं तु समीकृत्य पृथिव्यां सोऽचिनोद् गिरीन्।
   प्राक्सर्गदग्धानखिलांस्ततः सर्गेऽदधन्मनः।। कूर्म पुराण, 1.6.22-23,25
5. स्थैर्येणाचलानां .....। कादम्बरी, पृ0, 134
6. चञ्चल वसु .....।
   भूधरस्थिरमुपेयमागतं ..... महीपतिम्।।
   ततः किरातस्य वचोभिरुद्धतैः पराहतः शैल इवार्णवाम्बुभिः।
   जहौ न धैर्यं कुपितोऽपि पाण्डवः सुदुर्ग्रहान्तः करणा हि साधवः।। किरातार्जुनीय, 13.53;14.1
7. राणाप्रसाद शर्मा, पौराणिक कोश, पृ0, 296
8. वही, पृ0, 295
9. ततः उत्सारयामास शैलाञ्शतसहस्रशः।
   धनुष्कोट्या तदा वैण्यस्तेन शैलाः विवर्द्धिताः।। ब्रह्म पुराण, 4.90
10. एतद्दन्तिबलैर्विलोक्य निखिलामालिङ्गिताङ्गीं भुवं
    सङ्ग्रामाङ्गणसीम्नि जङ्गमगिरिस्तोमभ्रमाधायिभिः।
    पृथ्वीन्द्रः पृथुरेतदुग्रसमरप्रेक्षोपनग्रामर -
    श्रेणीमध्यचरः पुनः क्षितिधरक्षेपाय धत्ते धियम्।। नैषधचरित, 12.20
11. ..... भूधरं .....।।
    ..... गिरय .....।।
    ..... शैलसारः .....।
    ..... महीभृताम्। किरातार्जुनीय, 2.51;7.30;10.14;11.60
12. ..... अद्रौ.....।
    ..... शैलवना .....।
    ..... भूधरगुहान्तरतः.....।
    ..... क्षमाभृतः .....। शिशुपालवध, 2.48;6.21;9.19;11.46
13. ..... नगम्।।
    ..... शैलं .....।
    ..... धरणिभृद् .....।
    ..... शैलशीली। नैषधचरित, 2.67;3.68;4.18,7.95
14. अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
    पूर्वापरौ तोयनिधि वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानवदण्डः।।
    प्रजापतिः कल्पितयज्ञ भागं शैलाधिपत्यं स्वयमन्वतिष्ठत्।। कुमारसंभव, 1.1,17
15. अलकाधिपभृत्यदर्शितं शिवमुर्वीधरवर्त्म सम्प्रयान्।
    हृदयानि समाविवेश स क्षणमुद्वाष्पदृशां तपोभृताम्।। किरातार्जुनीय, 3.59 पर मल्लिनाथ की टीका (सोऽर्जुनोऽलकाधिपभृत्येन यक्षेण ..... शिवं निर्बाधमुर्वीधरवर्त्म हिमवन्मार्गं प्रति सम्प्रयान्प्रगच्छन्। ..... अर्थः।।)
16. i) जगतीशरणे युक्तो हरिकान्तः सुधासितः।
    दानवर्षी कृताशंसो नागराज इवाबभौ।। वही, 15.45 पर मल्लिनाथ की टीका

(जगतीति। ..... ना नरोऽर्जुनः। अगराजो हिमवानिव जगत्याबभावित्येकोऽर्थः।।)
ii) स पिशुङ्गजटावलिः किरन्नुरुतेजः परमेण मन्युना।
ज्वलितौषधिजातवेदसा हिमशैलेन समं विदिद्युते।। वही, 15.47

17. स मानसीं मेरुसखः पितृणां कन्यां कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञः।
मेनां मुनीनामपि माननीयामात्मानुरूपां विधिनोपयेमे।।
दिने दिने सा परिवर्धमाना लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा।
पुपोष लावण्यमयान्विशेषाञ्ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि।।
तां पार्वतीत्याभिजनेन नाम्ना बन्धुप्रियां बन्धुजनो जुहाव।
उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम।। कुमारसंभव, 1.18,25-26
18. शूलपाणेर्भगवतो रुद्रस्य च महात्मनः।
गिरौ हिमवति श्रेष्ठे तदा भृगुकुलोद्वह।।
देव्या विवाहे निवृत्ते रुद्राण्या भृगुनन्दनः।
समागमे भगवतो देव्या सह महात्मनः।। महाभारत, 13.84.60-61
19. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, द्वितीय खण्ड, पृ0, 567
20. i) ईशार्थमम्भसि चिराय तपश्चरन्त्या
यादोविलङ्घनविलोलविलोचनायाः।
आलम्बताग्रकरमत्र भवो भवान्याः।
श्च्योतन्निदाघसलिलाङ्गुलिना करेण।। किरातार्जुनीय, 5.29
ii) अस्मिन्नगृह्यत पिनाकभृता सलील -
मावद्धवेपथुरधीरविलोचनायाः।
विन्यस्तमङ्गलमहौषधिरीश्वरायाः
स्रस्तोरगप्रतिसरेण करेण पाणिः।। वही, 5.33
21. समुत्क्षिपन्यः पृथिवीभृतां वरं वरप्रदानस्य चकार शूलिनः।
त्रसत्तुषाराद्रिसुतासंभ्रमस्वयंग्रहाश्लेषसुखेन निष्क्रयम्।। शिशुपालवध, 1.50
22. i) जनुरधत्त सती स्मरतापिता हिमवतो न तु तन्महिमादृता।
ज्वलति भालतले लिखितः सतीविरह एव हरस्य न लोचनम्।। नैषधचरित, 4.45
ii) भूभृद्भवाऽङ्कभुवि राजशिखामणेः सा त्वञ्चास्य भोगसुभगस्य समःक्रमोऽयम्।
यन्नाकपालकलनाकलितस्य भर्त्तुरत्रापि जन्मनि सती भवती स भेदः।। वही, 21.117
iii) सतीमुमामुद्वहता च पुष्पसिन्दूरिकार्थं वसने सुनेत्र!।
दिशौ द्विसंधीमभि रागशोभे दिग्वाससोभे किमलम्भिषाताम्।। वही, 22.11
23. i) सायुज्यमृच्छति भवस्य भवाब्धियादस्तां पत्युरेत्य नगरीं नगराजपुत्र्याः।
भूताभिधानपटुमद्यतनीमवाप्य भीमोद्भवे! भवतिभावमिवास्तिधातुः।। वही, 11.117
ii) यथावदस्मै पुरुषोत्तमाय तां स साधुलक्ष्मीं बहुवाहिनीश्वरः।
शिवामथ स्वस्य शिवाय नन्दिनीं छदे पतिः सर्वविदे महीभृताम्।। वही, 16.12
24. इति .....।
विगलितजलभारशुक्लभासां निचय इवाम्बुमुचां नगाधिराजः।। किरातार्जुनीय, 4.37
25. न यावदेतावुदपश्यदुत्थितो जनस्तुषाराञ्जनपर्वताविव।
स्वहस्तदत्ते मुनिमासने मुनिश्चिरन्तनस्तावदभिन्यवीविशत्।। शिशुपालवध, 1.15
26. सरसिजवनान्युद्यत्पक्षार्यमाणि हसन्तु न?
क्षतरुचिसुहृच्चन्द्रं तन्द्रामुपैतु न कैरवम्?।
हिमगिरिदृषद्दायादश्रीप्रतीतमुदः स्मितं
कुमुदविपिनस्याथो पाथोरुहैर्निजनिद्रया।। नैषधचरित, 19.32
27. तुहिनगिरि शिलातल सदृशेन ..... आसीत्। कादम्बरी, पृ0, 51
28. i) तम् .....।
नगमुपरि हिमानीगौरमासाद्य जिष्णुः।
व्यपगत .....।
..... सीरपाणेः।।
ii) ससुरचाप ..... हिमपाण्डुभिः।
अविचलं शिखरैरुपबिभ्रतं ..... चयम्।। किरातार्जुनीय, 4.38;5.12
29. दधानम्भोरुहकेसरद्युतीर्जटाः शारच्चन्द्रमरीचिरोचिषम्।
विपाकपिङ्गास्तुहिनस्थलीरुहो धराधरेन्द्रं व्रततीततीरिव।। शिशुपालवध, 1.5
30. रहितरत्नचयान्न शिलोच्चयानपलताभवना न दरीभुवः।
..... महीरुहः।। किरातार्जुनीय, 5.10
31. अशक्नुवन् सोढुमधीरलोचनः सहस्रशमेरिव यस्य दर्शनम्।
प्रविश्य हेमाद्रिगुहागृहान्तरं निनाय बिभ्यद्दिवसानि कौशिकः।। शिशुपालवध, 1.53
32. एवमुक्त्वा महाबाहो हिमवन्तमुपागमत्।
वृतः पारिषदैर्घोरैर्नानाप्रहरणोद्यतैः।।
गन्धर्व .....।
ततः पपात गगनाद् गङ्गा हिमवतः सुता।।
समुद्धृतमहावर्ता मीनग्राहसमाकुला।
तां दधार हरौ राजन् गङ्गां गगनमेखलाम्।।
ललाटदेशे पतितां मालां मुक्तामयीमिव।
..... समुद्रगा।। महाभारत, 3.109.3,8-10
33. तस्माद् गच्छेरनुकनखलं शैलराजावतीर्णां
जह्नोः कन्यां सगरतनयस्वर्गसोपानपङ्क्तिम्। मेघदूत, 1.50
34. i) विततशीकरराशिभिरुच्छ्वैतैरुपलरोधविवर्तिभिरम्बुभिः।
दधतमुन्नतसानुसमुद्धतां धृतसितव्यजनामिव जाह्नवीम्।। किरातार्जुनीय, 5.15
ii) पतिं नगानामिव बद्धमूलमुन्मूलयिष्यंस्तरसा विपक्षम्।
लघुप्रयत्नं निगृहीतवीर्यस्त्रिमार्गगावेग इवेश्वरेण।। वही, 17.5
35. प्रतिनादपूरितदिगन्तरः पतन्पुरगोपुरं प्रति स सैन्यसागरः।
रुरुचे हिमाचलगुहामुखोन्मुखः पयसां प्रवाह इव सौरसैन्धवः।। शिशुपालवध, 13.27
36. i) इति कथयति तत्र नातिदूरादथ ददृशे पिहितोष्णरश्मिबिम्बः।
..... नगाधिराजः।। किरातार्जुनीय, 4.37
ii) उमापतिं .....।
अभ्युत्थितस्याद्रिपतेर्नितम्बमर्कस्य पादा इव हैमनस्य।। वही, 17.12
37. तपनमण्डलदीपितमेकतः सततनैशतमोवृतमन्यतः।
हसितभिन्नतमिस्रच्यं पुरः शिवमिवानुगतं गजचर्मणा।। वही, 5.2
38. पत्युर्गिरीणामयशः सुमेरुप्रदक्षिणाद्भस्वदनादृतस्य।
दिशस्तमश्चैत्ररथान्यनामपत्रच्छटाया मृगनाभिशोभि।। नैषधचरित, 22.29
39. स ददर्श शुभान् देशान् गिरेर्हिमवतस्तदा।
देवर्षिसिद्धचरितानप्सरोगणसेवितान्।। महाभारत, 3.178.6
40. क्षितिनभःसुरलोकनिवासिभिः कृतनिकेतमदृष्टपरस्परैः।
..... शम्भुना। किरातार्जुनीय, 5.3
41. i) मणिमयूखचयांशुकभासुराः सुरवधूपरिभुक्तलतागृहाः।
..... भुवः।। वही, 5.5
ii) सनाकवनितं नितम्बरुचिरं चिरं सुनिनदैर्नदैर्वृतममुम्।
..... सुधाधिवसति।। वही, 5.27
iii) श्रीमल्लताभवनमोषधयः प्रदीपाः
शय्या नवानि हरिचन्दनपल्लवानि।
अस्मिन्रतिश्रमनुदश्च सरोजवाताः
स्मर्तुं दिशन्ति न दिवः सुरसुन्दरीभ्यः।। वही, 5.28
42. शरीरमुत्सृजेत् तत्र विधिपूर्वमनाशके।
अध्रुवं जीवितं ज्ञात्वा यो वै वेदान्तगो द्विजः।।
अभ्यर्च्य देवतास्तत्र नमस्कृत्य मुनींस्तथा।
ततः सिद्धो दिवं गच्छेद् ब्रह्मलोकं सनातनम्।। महाभारत, 13.25.63-64
43. वीतजन्मजरसं परं शुचि ब्रह्मणः पदमुपैतुमिच्छताम्।

आगमादिव तमोपहादितः सम्भवन्ति मतयो भवच्छिदः।। किरातार्जुनीय, 5. 22

44. अलमेष विलोकितः प्रजानां सहसा संहतिमंहसां विहन्तुम्।
धनवर्त्म सहस्रधेव कुर्वन्हिमगौरैरचलाधिपः शिरोभिः।। वही, 5.17
45. वनेचराणां वनिसखानां दरीगृहोत्सङ्गनिषक्तभासः।
भवन्ति यत्रौषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः।। कुमारसंभव, 1.10
46. i) ग्रहविमानगणानभितो दिवं ज्वलयतौषधिजेन कृशानुना।
मुहुरनुस्मरयन्तमनुक्षपं त्रिपुरदाहमुमापतिसेविनः।। किरातार्जुनीय, 5.14
ii) गुणसम्पदा ..... महिते जगताम्।
नयशालिनि श्रिय इवाधिपतौ विरमन्ति न ज्वलितुमौषधयः।। वही, 5.24
iii) स पिशङ्गजटावलिः .....।
ज्वलितौषधिजातवेदसा हिमशैलेन समं विदिद्युते।। वही, 15.47
47. आरिराधयिषुर्गङ्गां .....।
सोऽपश्यत नरश्रेष्ठ हिमवन्तं नगोत्तमम्।।
शृङ्गैर्बहुधाकारैर्धातुमद्भिरलंकृतम्।
..... समन्ततः।। महाभारत, 3.108.4-5
48. विख्यातो हिमवान् पुण्यः शङ्करश्वशुरो गिरिः।
आकरः सर्वरत्नानां सिद्धचारणसेवितः।। वही, 13.25.62
49. i) मणिमयूखचयांशुकभासुराः .....।
..... भुवः।। किरातार्जुनीय, 5.5
ii) दधतमाकरिभिः करिभिः क्षतैः समवतारसमैरसमैस्तटैः।
..... नदीः।। वही, 5.7
iii) रहितरत्नचयान्न शिलोच्चयान .....।
..... महीरुहः।। वही, 5.10
iv) ससुरचापमनेकमणिप्रभैरपपयोविशद्ं हिमपाण्डुभिः।
..... चयम्।। वही, 5.12
50. सुलभैः सदा नयवताऽयवता निधिगुह्यकाधिपरमैः परमैः।
अमुना धनैः क्षितिभृतातिभृता समतीत्य भाति जगती जगती।। किरातार्जुनीय, 5.20
51. तत्र व्यक्तं दृषदि चरणन्यासमर्धेन्दुमौलेः
शश्वत् सिद्धैरुपचितबलिं भक्तिनम्रः परीयाः।
यस्मिन्दृष्टे करणविगमादूर्ध्वमुद्धूतपापाः .....।। मेघदूत, 1.55
52. अखिलम् .....।
अधिवसति सदा यदेनं जनैरविदितविभवो भवानीपतिः।। किरातार्जुनीय, 5. 21
53. विचकर्ष च संहितेषुरुच्चैश्चरणास्कन्दननामिताचलेन्द्रः।
धनुरायतभोगवासुकिज्यावदनग्रन्थिविमुक्तवह्निन शम्भुः।। वही, 13.18
54. आमेखलं सञ्चरतां घनानां छायामधः सानुगतां निषेव्य।
उद्वेजिता वृष्टिभिराश्रयन्ते शृङ्गाणि यस्तातपवन्ति सिद्धाः।। कुमारसंभव, 1.5
55. अथ जयाय नु मेरुमहीभृतो रभसया नु दिगन्तदिदृक्षया।
अभिययौ स हिमाचलमुच्छ्रितं समुदितं नु विलङ्घयितुं नभः।। किरातार्जुनीय, 5.1
56. इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः सततमसुतरं वर्णयन्त्यन्तरम्।
अमुमतिविपिनं वेद दिग्व्यापिनं पुरुषमिव परं पद्मयोनिः परम्।। वही, 5.18
57. आभाति बालातपरक्तसानुः सनिर्झरोद्गार इवाद्रिराजः।। रघुवंश, 6.60
58. i) सनाकवनितं ..... सुनिनदैर्नदैर्वृतममुम्।
..... अधिवसति।। किरातार्जुनीय, 5.27
ii) पृथुकदम्ब .....।
लघुतुषारतुषारजलश्च्युतं ..... दन्तिनम्।। वही, 5.9
59. विद्याधरानुचरितं .....।
विषोल्बणभुजंगैश्च दीप्तजिह्वैर्निषेवितम्।। महाभारत, 3.108.11
60. व्यथित .....।
फणभृतामभितो विततं ततं दयितरम्यलताबकुलैः कुलैः।। वही, 5.11
61. सनाकवनितं .....।
मता फणवतोऽवतो रसपरा परास्तवसुधा सुधाधिवसति।। वही, 5.27 पर मल्लिनाथ की टीका (सनाकवनितं ..... रसेन स्वादेन परोत्कृष्टा परास्तवसुधा त्यक्तभूलोका सुधामृतं चिरमधिवसति। अतोऽन्यत्र भूमण्डले कुत्रापि सुधा नास्तीत्यर्थः।)
62. i) ससुरचापमनेकमणिप्रभैरपपयोविशद्ं हिमपाण्डुभिः।
..... चयम्।। वही, 5.12
ii) कवचं .....।
शैलपतिरिव महेन्द्रधनुःपरिवीतभीमगहनो विदिद्युते।। वही, 12.9
63. i) पृथुकदम्ब .....।
..... घृतसदानसदाननदन्तिनम्।। वही, 5.9
ii) सम्प्रीयमाणोऽनुबभूव .....।
विषाणभेदं हिमवानसह्यं वप्रानतस्येव सुरद्विषस्य।। वही, 17.13
64. i) दधतमाकरिभिः करिभिः क्षतैः समवतारसमैरसमैस्तटैः।
विविधकामहिता महिताम्भसः स्फुटसरोजवना जवना नदीः।। वही, 5.7
ii) रहित .....।
विपुलिनाम्बुरुहा न सरिद्वधूरकुसुमान्दधतं न महीरुहः।। किरातार्जुनीय, 5. 10
iii) व्यथितसिन्धुमनीरशनैः शनैरमरलोकवधूजघनैर्घनैः।
..... कुलैः।। वही, 5.11
iv) कुररीगणः ..... सकलमं कमलम्।
इह सिन्धवश्च वरणावरणाः करिणां मुदे सनलदानलदाः।। वही, 5.25
65. i) मणिमयूखचयांशुकभासुराः .....।
..... पुर इवोदितपुष्पवना भुवः।। वही, 5.5
ii) पृथुकदम्बकदम्बकराजितं ग्रथितमालतमालवनाकुलम्।
.....दन्तिनम्।। वही, 5.9
iii) रहित .....।
विपुलिनाम्बुरुहा न सरिद्वधूरकुसुमान्दधतं न महीरुहः।। वही, 5.10
iv) कुररीगणः कृतरवस्तरवः कुसुमानताः सकमलं कमलम्।
..... अनलदाः।। वही, 5.25
66. अविरतोज्झितवारिविपाण्डुभिः .....।
उदितपक्षमिवारतनिःस्वनैः पृथुनितम्बविलम्बिभिरम्बुदैः।। वही, 5.6
67. पतिं नगानामिव बद्धमूलमुन्मूलयिष्यंस्तरसा विपक्षम्।
..... इवेश्वरेण।। वही, 17.5
68. जयारवक्ष्वेडितनादमूर्च्छितः शरासनज्यातलवारणध्वनिः।
असम्भवन्भूधरराजकुक्षिषु प्रकम्पयन्नामवतस्तरे दिशः।। वही, 14.29
69. गणाधिपानामविधाय निर्गतैः परासुतां मर्मविदारणैरपि।
जवादतीये हिमवानधोमुखैः कृतापराधैरिव तस्य पत्रिभिः।। वही, 14.54
70. महास्त्रदुर्गे .....।
भुजङ्गपाशान्भुजवीर्यशाली प्रबन्धनाय प्रजिघाय जिष्णुः।।
तमाशु चक्षुःश्रवसां समूहं मन्त्रेण तार्क्ष्योदयकारणेन।
नेता नयेनेव परोपजापं निवारयामास पतिः पशूनाम्।।
दरीमुखैरासवरागताम्रं विकासि रुक्मच्छदधाम पीत्वा।
ज्वानिलाधूर्णितसानुजालो हिमाचलः क्षीब इवाचकम्पे।। वही, 16.36,42,46
71. सतीविजय, प्रथम परिच्छेद, पृष्ठ, 7-8